Vol 4 Issue 3 Dec 2014

ISSN No : 2249-894X

Monthly Multidisciplinary Research Journal

Review Of Research Journal

Chief Editors

Ashok Yakkaldevi
A R Burla College, India

Flávio de São Pedro Filho
Federal University of Rondonia, Brazil

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Kamani Perera
Regional Centre For Strategic Studies, Sri Lanka

Welcome to Review Of Research

RNI MAHMUL/2011/38595 **ISSN No.2249-894X**

Review Of Research Journal is a multidisciplinary research journal, published monthly in English, Hindi & Marathi Language. All research papers submitted to the journal will be double - blind peer reviewed referred by members of the editorial Board readers will include investigator in universities, research institutes government and industry with research interest in the general subjects.

Advisory Board

Flávio de São Pedro Filho
Federal University of Rondonia, Brazil

Kamani Perera
Regional Centre For Strategic Studies, Sri Lanka

Ecaterina Patrascu
Spiru Haret University, Bucharest

Fabricio Moraes de AlmeidaFederal
University of Rondonia, Brazil

Anna Maria Constantinovici
AL. I. Cuza University, Romania

Romona Mihaila
Spiru Haret University, Romania

Delia Serbescu
Spiru Haret University, Bucharest, Romania

Xiaohua Yang
University of San Francisco, San Francisco

Karina Xavier
Massachusetts Institute of Technology (MIT), USA

May Hongmei Gao
Kennesaw State University, USA

Marc Fetscherin
Rollins College, USA

Liu Chen
Beijing Foreign Studies University, China

Mabel Miao
Center for China and Globalization, China

Ruth Wolf
University Walla, Israel

Jie Hao
University of Sydney, Australia

Pei-Shan Kao Andrea
University of Essex, United Kingdom

Loredana Bosca
Spiru Haret University, Romania

Ilie Pintea
Spiru Haret University, Romania

Mahdi Moharrampour
Islamic Azad University buinzahra Branch, Qazvin, Iran

Titus Pop
PhD, Partium Christian University, Oradea,
Romania

J. K. VIJAYAKUMAR
King Abdullah University of Science & Technology,Saudi Arabia.

George - Calin SERITAN
Postdoctoral Researcher
Faculty of Philosophy and Socio-Political Sciences
Al. I. Cuza University, Iasi

REZA KAFIPOUR
Shiraz University of Medical Sciences
Shiraz, Iran

Rajendra Shendge
Director, B.C.U.D. Solapur University, Solapur

Nimita Khanna
Director, Isara Institute of Management, New Delhi

Salve R. N.
Department of Sociology, Shivaji University, Kolhapur

P. Malyadri
Government Degree College, Tandur, A.P.

S. D. Sindkhedkar
PSGVP Mandal's Arts, Science and Commerce College, Shahada [M.S.]

Anurag Misra
DBS College, Kanpur

C. D. Balaji
Panimalar Engineering College, Chennai

Bhavana vivek patole
PhD, Elphinstone college mumbai-32

Awadhesh Kumar Shirotriya
Secretary, Play India Play (Trust),Meerut (U.P.)

Govind P. Shinde
Bharati Vidyapeeth School of Distance Education Center, Navi Mumbai

Sonal Singh
Vikram University, Ujjain

Jayashree Patil-Dake
MBA Department of Badruka College Commerce and Arts Post Graduate Centre (BCCAPGC),Kachiguda, Hyderabad

Maj. Dr. S. Bakhtiar Choudhary
Director,Hyderabad AP India.

AR. SARAVANAKUMARALAGAPPA
UNIVERSITY, KARAIKUDI,TN

V.MAHALAKSHMI
Dean, Panimalar Engineering College

S.KANNAN
Ph.D , Annamalai University

Kanwar Dinesh Singh
Dept.English, Government Postgraduate College , solan

More.....

Address:-Ashok Yakkaldevi 258/34, Raviwar Peth, Solapur - 413 005 Maharashtra, India
Cell : 9595 359 435, Ph No: 02172372010 Email: ayisrj@yahoo.in Website: www.ror.isrj.org

Review Of Research
Vol. 4 | Issue. 3 | Dec. 2014
Impact Factor : 2.1002 (UIF)
ISSN:-2249-894X
Available online at www.ror.isrj.org

ORIGINAL ARTICLE

वैदिक काल में पर्यावरण संरक्षण : एक ऐतिहासिक अध्ययन

डी. पी. सकलानी , प्रेम बहादुर

[1]Professor
[2]शोध छात्र ,
इतिहास एवं पुरातत्व विभाग, हे.न.ब.ग.वि.वि. श्रीनगर गढ़वाल उत्तराखण्ड.

***सारांश*:**

पर्यावरण एक अविभाज्य समष्टि है, जिसकी रचना भौतिक, जैविक एवं सांस्कृतिक तत्वों की पारस्परिक क्रियाशीलता से होती है जिसमें मानव की केन्द्रीय भूमिका होती है। सृष्टि के विकास में मानव और पर्यावरण का अभीष्ट एवं अविभाज्य सम्बन्ध रहा है। आदिकाल से आधुनिक काल तक मानव सभ्यता की गतिशीलता के क्रम का निर्धारण दोनों के पारस्परिक संबंधों (दोहन एवं विदोहन) की प्रक्रिया के रूप में दृष्टिगत होती है जिसका प्रभाव विभिन्न पर्यावरणीय समस्याओं के रूप में परिलक्षित हो रहा है।

प्रस्तावना :–

प्राचीन काल में मानव को प्रकृति से निरन्तर महत्वपूर्ण ज्ञान की प्राप्ति होती रही है। इसी दृष्टि से मानव आखेटक से भोज्य संग्राहक की विकास यात्रा को सफलतापूर्वक पूर्ण कर पाया है। पर्यावरण के अतिशय दोहन से उसे यदा–कदा जन–धन की क्षति भी उठानी पड़ी। इसी क्रम में वैदिक कालीन मानव द्वारा प्रकृति एवं पर्यावरण के महत्व को समझते हुए उसके विभिन्न अवयवों को पूज्य एवं सम्मानित स्थान देकर संग्रहित एवं सरंक्षित करने का निरन्तर प्रयास किया गया। ऋग्वेद में कहा गया है कि अमृतरूपी जल जीव–जगत के लिए कल्याणकारी हो, जिसमें वरुण, विश्वदेव और वैश्वानराग्नि प्रविष्ट हैं।[1] इन्द्र ही द्युलोक और पृथ्वी को उत्पन्न करने वाला है।[2] यजुर्वेद में समस्त जीव–जगत से मित्रवत व्यवहार करने का निर्देश दिया गया है।[3] अथर्ववेद में कहा गया है कि जिस धरती पर वृक्ष, वनस्पति एवं औषधियां हैं जहाँ स्थवर और जंगम सबका निवास है, उस विश्र्वंभरा धरती (मातृ भूमि) के प्रति हम कृतज्ञ हैं, हम उसकी स्वतंत्रता से प्राण–प्रण से रक्षा करेंगे।[4] प्रस्तुत शोध पत्र में इन्हीं उक्त बिंदुओं को विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है।

वैदिक ग्रन्थों में वायु को देवतुल्य, प्राणदायी, मित्र, और पालनकर्ता आदि रूपों में स्वीकार किया गया है। वेदों के अनुसार स्वच्छ वायु जीवनदायिनी औषधि के समान है जिससे जीव–जगत स्वस्थ्य, सुन्दर एवं निरोग रह सकता है। ऋग्वेद आदिकालीन प्रथम ग्रन्थ है जिसमें प्रकृति की उपासना को महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है और साथ ही साथ पर्यावरण के प्रति गम्भीर चिन्तन, गहन अध्ययन एवं सजगरूप से संरक्षण की चर्चा भी की गयी है। प्राचीन कालीन ऋषियों, मुनियों, मनीषियों ने अपनी साधना से यह अनुभूति कर ली थी कि पर्यावरण रक्षा ही स्वात्मरक्षा है।[5] प्रकृति एवं पर्यावरण के प्रमुख तत्वों में वायु तत्व को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है क्योंकि यह प्रकृति के समस्त पक्षों को प्रभावित करता है। वायु की उत्पत्ति आकाश से होती है आकाश असीम है। अतः वायु भी असीम है। वायु गतिशील है और जीवनदायी समस्त तत्वों का वाहक भी है। इसीलिए प्राचीन काल से ही वायु की शुद्धि एवं पुष्टि के लिए यज्ञ को एक प्रभावी माध्यम के रूप में स्वीकार किया गया है। यज्ञ द्वारा प्राणप्रद वायु की प्राप्ति हेतु स्पष्ट निर्देश दिया गया है कि पवित्र मित्रवायु की प्राप्ति के लिए घृत मिश्रित हवि से यज्ञ किया जाना चाहिए।[6] आर्य संस्कृति का प्रधान अंग 'यज्ञ' को माना जाता है जिसे एक विशिष्ट वैज्ञानिक आविष्कार भी कहा जा सकता है क्योंकि मानव जीवन का आधार अन्न एवं पशु है, पशुओं एवं अन्य जीव–जन्तुओं का आधार पेड़–पौधे एवं वनस्पतियॉ हैं, पेड़–पौधों का आधार वर्षा है, वर्षा का आधार हवा, शुद्ध वातावरण

Title: "*वैदिक काल में पर्यावरण संरक्षण : एक ऐतिहासिक अध्ययन*" , Source: Review of Research [2249-894X] ***डी. पी. सकलानी , प्रेम बहादुर*** **yr:2014 | vol:4 | iss:3**

एवं वायुमण्डल है। इसी वायु–मण्डल की शुद्धता हेतु यज्ञ का विधान हमारे वैदिक कालीन ग्रन्थों में किया गया है जिसमें विभिन्न प्रकार के वायु शोधक हवन सामग्रियों का प्रयोग किया जाता है। आयुर्वेदज्ञ ऋषि ने धुऑ और विषाक्त वायु से बचने के लिए प्रतिविष के रूप में लाक्षा, हरिद्रा, अतीस, हरीतकी, मोथा, हरेणुका, इलायची, दालचीनी, तगर, कूठ, और प्रियंगु आदि द्रव्यों को अग्नि में जलाकर उससे उत्पन्न धूम के द्वारा वायु को शुद्ध करने का निर्देश दिया है।[7] वैदिक कालीन आर्य इस बात को भली–भॉति समझते थे कि प्रदूषण को समाप्त नहीं किया जा सकता है क्योंकि प्रदूषण भी प्रकृति प्रदत्त तत्वों का एक अविभाज्य अंग है किन्तु इसे हविर्यज्ञ द्वारा संतुलित किया जा सकता है। इसीलिए ऋग्वेद में कहा गया है कि यदि वायु प्रदूषित भी हो जाय तो भी वह हविर्गन्ध से युक्त होकर पवित्र एवं शुद्ध हो जाती है।[8]

अथर्वेद के बारहवें काण्ड का पहला सूक्त 'भूमि सूक्त' है जिसमें 63 मंत्र हैं। इस सूक्त को ''मातृभूमि का वैदिक राष्ट्रीय गीत'' भी कहा जाता है[9] जिसमें भूमि को माता के रूप में स्वीकार किया है तथा कहा गया है कि भूमि का अर्थ 'मातृभूमि' अर्थात् उत्पन्नकर्ता, पालनकर्ता एवं वृद्धिकर्ता है। इसी सूक्त के 10वें मंत्र में कहा गया है कि जिस भूमि को इन्द्र ने अपने लिए शत्रुओं से रहित कर दिया है।[10] इससे यह प्रतीत होता है कि इन्द्र किसी कल्पित स्वर्ग में नहीं रहता अपितु इसी धरती पर निवास करने वाला सम्राट(राजा) हो सकता है जो पृथ्वी पर ही अपने शत्रुओं को पराजित करता है, इस शत्रु का तात्पर्य यहॉ के प्रदूषण रूपी शत्रु से लगाया जा सकता है क्योंकि मॉ रूपी भूमि के शत्रु विभिन्न प्रकार के ऐसे कारक हो सकते हैं जिससे पृथ्वी एवं उस पर विद्यमान समस्त तत्वों को हानि हो सकती थी एवं पर्यावरण असन्तुलित हो सकता था। अथर्वेद में कहा गया है कि हे मातृभूमि हम मरणधर्मा मनुष्य तुमसे उत्पन्न होते हैं और तुझ पर ही घूमते–फिरते हैं, अतः मेरी रक्षा कर।[11] अर्थात् हमें शुद्ध वातावरण प्रदान कर, तू जंगल, नदी, पर्वत, हरियाली आदि को धारण कर जिससे हमें स्वच्छ, सुन्दर वातावरण एवं पर्यावरण मिल सके।

यजुर्वेद में कहा गया है कि हे माता पृथ्वी न तू हमारी हिंसा कर और न हम तेरी हिंसा करें।[12] इससे यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य द्वारा इस पृथ्वी के समक्ष यह संकल्प लिया गया है कि न हम मानवीय गतिविधियों द्वारा इस वसुन्धरा को प्रदूषित करेगें और न ही यह धरती मॉ हमें प्राकृतिक आपदा, भूस्खलन, सूखा, बाढ़, भूकम्प आदि द्वारा नष्ट करे। ऋग्वेद में मित्र एवं वरूण को ''विश्वस्य प्रचेतसा'' कहा गया है जिसका अर्थ सबको सावधान कर चेतावनी देने वाला है।[13] यहॉ पर चेतावनी का तात्पर्य पर्यावरण की सुरक्षा की चेतावनी, प्रदूषण न करने की चेतावनी, प्रकृति के साथ अनायास छेड़–छाड़ न करने की चेतावनी आदि से लगाया जा सकता है क्योंकि ऋग्वेद में वरूण के लिए ऋतवान् (4.1. 2), ऋतस्यगोपा (5.63.1) आदि शब्द आया है जिसका अर्थ ऋत्वाला, अर्थात् ऋतु (मौसम) रूपी सत्य से युक्त तथा ऋतुओं की रक्षा करने वाला है। वृष्टि विज्ञान के दृष्टिकोण से देखने पर पता चलता है कि मानसून और वर्षा मूल रूप से समुद्र पर ही निर्भर है। समुद्र से उठता हुआ भाप (जलवाष्प) मेघ का कारण है, मेघ से ही वर्षा होती है। यजुर्वेद14 में इस वाष्प के बनने की प्रक्रिया को मधुमय लहर कहा गया है और वर्षा को अमृत की नाभि अर्थात् जीवन शक्ति का केंद्र कहा गया है तथा यह भी कहा गया है कि वर्षा का हृदय समुद्र है।[15] ऋग्वेद में वर्षा के लिए यज्ञ का विधान है, कहा गया है कि 99 हजार आहुति दें तो शीघ्र वर्षा हो जाती है।[16] इसमें 12 मंत्रों में कृत्रिम वर्षा कराने का भी विधान है।[17]

अथर्वेद में पशुपालन के विषय में कहा गया है कि पशुओं के लिए शुद्ध जल एवं सुन्दर चारागाह की व्यवस्था होनी चाहिए जिससे पशुओं को शुद्ध जल एवं शुद्ध चारा उपलब्ध हो सके और जिसे पशु ग्रहण करके हिष्ट–पुष्ट हो जॉय।[18] प्रस्तुत श्लोक में शुद्ध एवं सुन्दर का तात्पर्य स्वच्छता से लगाया जा सकता है जिससे यह विदित होता है कि वेदों में प्रत्येक जीव– जन्तु के लिए स्वच्छता का मापदण्ड निर्धारित किया गया था जिससे वे निरोग एवं स्वस्थ्य रहें। एक अन्य श्लोक में कहा गया है कि जहॉ गाय एवं अन्य पशुओं का संरक्षण होता है वहॉ सौभाग्य की वृद्धि होती है।[19] वैदिक काल में गायों की प्राप्ति एवं अधिक से अधिक गायों का स्वामी बनना महान उपलब्धि मानी जाती थी जिसके कारण कबीलों के युद्ध भी अधिकतर गायों एवं पशुओं के लिए ही होते थे। आर्य संस्कृति में गाय को सम्पत्ति माना जाता था। ऋग्वेद में धनवान व्यक्ति को गोमत कहा गया है। एक व्यक्ति को शतदाय कहा गया है, क्योंकि उसके प्राण का मूल्य सौ गायों के बराबर था[20] इससे यह स्पष्ट होता है कि गाय का प्रयोग मुद्रा के रूप में भी किया जाता था क्योंकि वैदिक काल में गाय विनिमय का माध्यम थी। वैदिक कालीन राजा भी गोप या गोपति कहलाता था। गाय को मारना पाप माना जाता था जिसके कारण गाय के लिए अघन्या शब्द का प्रयोग किया गया है। ऋग्वेद में गाय के खोने, गड्ढों में गिरने, हाथ–पैर टूटने एवं चोरी हो जाने का भय आदि का उल्लेख प्राप्त होता है।[21] अथर्वेद में गाय की अत्यधिक प्रशंसा की गयी है और गाय मारने वालों के लिए मृत्यु दण्ड का विधान भी किया गया है।[22]

वेदों में कृषि कार्य के विधि–विधान एवं फसल संरक्षण हेतु अनेक नियम बताये गये हैं। कृषि के लिए भूमि, बीज, धूप, वायु, जल, खाद, कृषि नाशक कीटाणु निवारण आदि का स्पष्ट उल्लेख प्राप्त होता है। यजुर्वेद में उर्वरा भूमि को नमस्कार किया गया है[23] क्योंकि उर्वरा भूमि में बोया गया बीज ठीक ढंग से पनपता है। फसल संरक्षण का ध्यान रखते हुए अथर्वेद में कहा गया है कि आकाशीय बिजली खेत में न गिरे और सूर्य की तीव्र किरणें फसल को नष्ट न करें[24] इसकी प्रार्थना की गयी है। अतः वेदों में सन्तुलित एवं व्यवस्थित वातावरण का स्पष्ट संकेत प्राप्त होता है।

वेदों में यज्ञ को प्रदूषण समस्या का सर्वोत्तम समाधान बताया गया है क्योंकि यज्ञ ही वह विधि है जिसके द्वारा प्राकृतिक सन्तुलन बनाये रखना सम्भव हो सकता है। यज्ञ से ही वातावरण की शुद्धि, वायुमण्डल की पवित्रता तथा पर्यावरण की सुरक्षा आदि सम्भव हो पाती है। यज्ञ के द्वारा भू–प्रदूषण, जल–प्रदूषण, वायुप्रदूषण और ध्वनि प्रदूषण को

दूर किया जा सकता है। यज्ञ के समय मंत्रों का सस्वर पाठ ध्वनि प्रदूषण की समस्या का उत्तम हल है। सस्वर मंत्रपाठ से होने वाली ध्वनि–तरंगें ध्वनि–प्रदूषण को बहुत अंश तक नष्ट करती हैं।[25] फ्रांस के एक वैज्ञानिक ट्रिलबर्ट का कथन है कि हवन सामग्री में प्रयुक्त शक्कर आदि मिष्ट पदार्थो में वायु को शुद्ध करने की असाधारण शक्ति है। इसके धुँए में क्षय, चेचक, हैजा आदि बीमारियों के कीटाणु नष्ट करने की क्षमता है।[26] एक अन्य फ्रांसीसी वैज्ञानिक हैफकिन का मानना है कि घी को जलाने से रोगाणुओं का नाश हो जाता है।

प्राचीन वैदिक कालीन शिक्षा व्यवस्था श्रुतिज्ञान की अवधारणा पर आधारित थी फिर भी उस समय के ऋषि–मुनि पर्यावरण संरक्षण के प्रति अत्यन्त सजग एवं जागरूक थे और इसीलिए उन्होंने पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए प्रकृति के समस्त उपादानों को देवतुल्य माना तथा सूर्य, पृथ्वी, अग्नि, वर्षा ,चन्द्र, लता–वनस्पति, उषस्, पर्वत, जल, नदी, आकाश, पाताल तथा प्रकृति के स्थिर एवं गतिशील तत्वों को दैवत रूप प्रदान किया। उनके आध्यात्मिक एवं दार्शनिक चिन्तन का उद्देश्य सदैव प्रकृति प्रदत्त तत्वों हेतु कल्याणकारी एवं सुरक्षात्मक रहा है। जल, वायु, अन्न, फल–फूल, कंन्द–मूल, आदि जीवन धारण के लिए अनिवार्य थे, जिनका उन्हें ज्ञान था। इन प्राकृतिक उपादानों के पूजन का अभिप्राय इनको दूषित न करना तथा स्वच्छ बनाये रखना था। जल प्रदूषण से मुक्ति के उपायों पर वैदिक ऋषियों ने गहन चिन्तन एवं विचार व्यक्त किया है। वैदिक काल में जल में फैलने वाले कृमियों को दूर करने के लिए अजश्रृंगी, गुग्गुल, पीलू, मॉसी, औक्षगन्धी, प्रमोदिनी आदि औषधियों तथा पीपल, वट, शिखण्डी, अर्जुन आदि वृक्षों का प्रयोग होता था। वैदिक कालीन ऋषियों नें जल संरक्षण एवं संचयन को अत्यन्त महत्वपूर्ण माना है।[27]

वैदिक साहित्य में वृक्ष–वनस्पतियों को महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया गया है और कहा गया है कि वनस्पतियों में सभी देवों की शक्तियां विद्यमान हैं जिससे मनुष्य एवं जीव–जन्तुओं को जीवन शक्ति मिलती है और उनकी रक्षा होती है। ऋग्वेद में वृक्ष–वनस्पतियों के लिए कहा गया है कि ये प्राणवायु(आक्सीजन) रूपी अमृत के दाता हैं जिससे समस्त जीव–जन्तुओं का जीवन संम्भव है, अतः ये स्तुत्य हैं। वृक्ष हमें ऑक्सीजन के साथ–ही–साथ भरण– पोषण हेतु फल–फूल एवं कन्द–मूल भी प्रदान करते हैं। वृक्ष एवं वनस्पतियां वर्षा के लिए भी उत्तरदायी हैं। अथर्वेद में उद्धरण आया है कि '' अपामार्ग'' नामक वृक्ष जहॉ होता है वहॉ भय, रोग एवं प्रदूषण नहीं आ सकता है।[28] इसी प्रकार एक स्थान पर कहा गया है कि गुग्गुल की सुगन्ध मात्र से बीमारियॉ दूर भाग जाती हैं[29]

हिन्दू धर्मशास्त्रों में कहा गया है कि सृष्टि के समस्त जीवों की सुरक्षा मनुष्य का धर्म है, प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाकर ही मानव जीवन सुखमय एवं शान्तिमय हो सकता है।[30] ईश्वर एवं प्रकृति के एकत्व का विशद वर्णन हमें गीता के दशवें अध्याय(21–41) में स्पष्ट रूप से मिलता है[31] ईश्वर और प्रकृति अलग–अलग नहीं है एक ही है इसका स्पष्ट उल्लेख हमें गीता से प्राप्त होता है कि ईश्वर ही प्रकृति की उत्पत्ति, पालन एवं विनाश का मूल कारण है।[32] गीता में कहा गया है कि मैं इस जगत का पिता हूँ, माता हूँ, धारण करने वाला हूँ, पितामह हूँ।[33]

यजुर्वेद में पर्यावरण के प्रति चेतनता का स्पष्टतः निर्देश दिया गया है जो मांगलिक उत्सवों में शान्ति पाठ के समय प्रयुक्त होता था।[34] द्विलोक हमें शान्ति प्रदान करें, अन्तरिक्ष लोक शान्ति प्रदान करें, पृथ्वी लोक शान्ति प्रदान करें, जल शान्ति प्रदान करें, औषधियॉ शान्ति प्रदान करें, वनस्पतियॉ शान्ति प्रदान करें, ब्रह्म शान्ति प्रदान करें, सब ओर शान्ति ही शान्ति हो, वह शान्ति मुझको प्राप्त हो।[35]

यजुर्वेद में कहा गया है कि समस्त प्राणियों के जीवन के लिए अक्षय ज्योति प्रदान करने वाले ही पृथ्वी के वास्तविक पुत्र हैं।[36] वैदिक साहित्य में वर्णित पर्यावरण सम्बन्धी चित्रण ने ही हमारे देश को स्वच्छ, समृद्ध एवं धनधान्य से सम्पन्न बनाया था। वैदिक कालीन शास्त्रों का अध्ययन, विज्ञान का उपार्जन, एवं विद्या का अर्जन तभी सार्थक हो सकता है, जब उसे मानवीय व्यवहार में लागू किया जाय। वैदिक कालीन ऋषियों के चिन्तन का ही परिणाम था कि तत्कालीन पर्यावरण स्वच्छ, सुन्दर एवं मानवीय विकास में सहायक था। वैदिक कालीन आर्य जिन प्राकृतिक शक्तियों की उपासना किया करते थे, कालान्तर में वही शक्तियॉ उनके देवता के नाम से अभिहित की जाने लगी। वैदिक साहित्य में पर्यावरण से सम्बन्धित पृथ्वी, आकाश, सूर्य, समुद्र, नदियॉ, पशु, (विशेषतः गाय), वृक्ष, आदि सभी का वर्णन है।[37] ऋग्वेद के दशवें मण्डल में एक पूरा सूक्त ही नदियों की स्तुति में है जो नदी सूक्त कहलाता है,जिसमें सिन्धु तीरस्थ किसी प्रैयमेध नामक ऋषि ने अपनी सहायक नदियों से सम्बन्धित सिन्धु से प्रार्थना की है। सूक्त के पंचम मंत्र में सिन्धु की पूर्वी सहायक नदियों के नाम क्रम से दिए गए हैं।

वैदिक संहिताओं में साम का महत्व अत्यन्त गौरवमयी माना गया है जिससे सर्वत्र पर्यावरणीय चेतना दृष्टिगत होती है। साम–गायन के समान पक्षियों के गायन को सरस, सुन्दर एवं मधुर कहा गया है।[38] पक्षियों के मधुर संगीत से पर्यावरण शुद्ध एवं वातावरण सौहार्द्रपूर्ण हो जाता है। सामवेद के ऋक्–समूह के पूर्वार्चिक में छः अध्याय हैं। इसकी प्रथम से लेकर पंचम– आध्याय तक की ऋचाऍ ग्राम–गान कही जाती हैं। इनमें प्रथम प्रपाठक को पर्व, द्वितीय से चतुर्थ तक ऐंद्रपर्व, पंचम पवमान, षष्ठ को आरण्य पर्व की संज्ञा दी गयी है।[39] वस्तुतः उपर्युक्त सभी ऋचाओं में पर्यावरण चिन्तन परिलक्षित होता है। वैदिक साहित्य के दर्शन में पंचमहाभूत सिद्धान्त निर्णित रूप से मान्य है अर्थात भारतीय दार्शनिक चिन्तन जगत् के मूलभूत पॉच तत्वों–पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, और आकाश का निदर्शन करते हैं और इन पॉचों तत्वों को भी एक ही तत्व से विकसित मानते हैं। सम्पूर्ण संसार एक ही मूलतत्व का विस्तार है यह तथ्य वैदिक कालीन ऋषि–मनीषियों के चिन्तन में स्पष्ट होता है। ऋग्वेद के नवें मण्डल में उल्लिखित सोम पौधे का निवास स्थान मूजवन्त

पर्वत को बताया गया है जिसमें भेषज नाम के अनेक तत्वों का समावेश बताया गया है। वेद जिस जल में अग्नि और सोम का योग बतलाता है, आधुनिक विज्ञान उसमें हाइड्रोजन और आक्सीजन का योग स्वीकारता है। वैदिक ग्रन्थों में सोम को देवताओं का प्रिय पेय–पदार्थ अर्थात अमृत बताया गया है। इस प्रकार वेदों में जो प्रकृति चिन्तन है वह आज के युग के विज्ञान के अत्यन्त समीप माना जा सकता है। इस प्रकार मूल तत्व की दृष्टि से दोनों में किसी प्रकार के भेद को नकारा जा सकता है। यद्यपि वेदों को नितान्त सूक्ष्मतम पराभौतिक दर्शनों एव सर्वोच्च आध्यात्मिक सत्यों का निदर्शक माना जाता रहा है तथापि आज के युग में वैदिक चिन्तन मानव जीवन एवं संसार में उपस्थित समस्त चुनौतियों का उत्तर देने में सक्षम है। जिसका उदाहरण आज की पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान की चुनौतियॉ है।

अथर्ववेद के सूक्त (11/4) में प्राण को सभी कुछ (देवता,प्रजापति,मृत्यु आदि) बताकर सिद्ध किया गया है कि वही वर्षा करता है और सब औषधियों–वनस्पतियों को उत्पन्न कर उनमें रस का संचार करता है।[40] वेदों में ही सर्वप्रथम पर्यावरणीय चेतना का साक्ष्य प्राप्त होता है; क्योंकि सर्वप्रथम अहिंसा और हिंसा का उल्लेख हमें वेदों में ही मिलता है। गाय को सर्वप्रथम वेदों में ही 'अघन्या'(वध न करने योग्य) कहा गया है। वेद मनुष्य को जिस कर्म में प्रवृत्त करता है वह अहिंसात्मक है एवं जिस कर्म से निवृत्ति की बात करता है वह हिंसात्मक है। वेदों में परशु प्रहार द्वारा वृक्ष छेदन को अहिंसा की श्रेणी में रखा गया है क्योंकि औषधि, पशु, मृग आदि का यज्ञ में सम्यक् विधिपूर्वक उपयोजन होने से वे परम उत्कर्ष को प्राप्त होते हैं।[41] अतः यज्ञ में इनका विधान अभ्युदयकारक होता है, हिंसात्मक नहीं। राष्ट्र–रक्षा के लिए आत्मोत्सर्ग करने वाला वीर वंदनीय है, ठीक वैसे ही कल्याणार्थ वृक्ष की शाखा का यज्ञ के लिए विधिपूर्वक छेदन करना अनुग्रह है, हिंसा नहीं।[42]

जिस प्रकार मनुष्य खेत को पानी देने के लिए चरस भर–भर कर कूपों को दूहते हैं उसी प्रकार मरूत कूप रूपी मेघ से जल निकाल कर पृथ्वी को सींचते हैं। जब इस पृथ्वी पर अग्निदेव ने प्रथम जीव रूप में जल के गर्भ में जन्म लिया तो उनकी माता ने उनको मन्त्रों की स्तुतियों द्वारा लालन–पालन करके बड़ा किया , इसीलिए भौतिक जीव अब भी स्तुतियों से बढ़ते हैं[43] तथा तिरस्कृत(झिड़कने) करने से नष्ट होते हैं। ऋग्वेद में कहा गया है कि अग्निदेव जल से उत्पन्न हुए अर्थात जीव रूप में इस प्रकार शरीर को रच लेते हैं जैसे सोम अर्थात् औषधियों और वनस्पतियों के अन्तर्गत रस उनके शरीर को रचता है क्योंकि रस के द्वारा ही वृक्षादि जीव की वृद्धि होती है और रस के सूखने से मृत हो जाते हैं।[44] यह भी कहा गया है कि द्यौ और पृथ्वी को धारण करने वाले जो परमात्मा रूपी अग्नि है वह यही है जो साक्षात् में वनों को जला रहे हैं इसलिए प्रार्थना करता हूॅ कि हे अग्निदेव आप हमारी गौवों (गायों व पशुओं) के चरने के हरे–भरे सुन्दर स्थानों की रक्षा करें[45] अर्थात उन्हें न जलायें। जैसे–अग्नि व सूर्य की उष्णता और प्रकाश न होने से औषधियां मर जाती हैं अर्थात् अग्नि सूर्य के रूप में औषधियों के जीवन का कारण है, उसी प्रकार मानव एवं पशु–पक्षियों एवं जीव–जन्तुओं के जीवन के लिए भी सूर्य रूपी अग्नि की आवश्यकता है। मानव कर्म के बारे में ऋग्वेद में कहा गया है कि सब जीव जिन कर्मों को करते हैं अर्थात जो मानव समुदाय के कर्मों का परिणाम है वह ऋत् की प्रेरणा से होता है, जैसे नदी के जल समुदाय का परिणाम समुद्र की प्राप्ति है, इसी प्रकार मनुष्य समुदाय के कर्मों का परिणाम किसी विशेष अवस्था की प्राप्ति है। अर्थात स्वच्छ एवं स्वस्थ्य वातावरण एवं पर्यावरण जो मानव तथा प्रकृति दोनों के हित के लिए है उनके अनुकूल कर्म करना सृष्टि कर्म में सहायक बनना है। यह यश कर्म है, इससे अन्यत्र कर्म बन्धन का हेतु अर्थात पाप कर्म है। समस्त प्राणियों का जीवन समूह ऋत् की भावना है जो केवल एक जीव के अर्थ अर्थात अपने स्वार्थ का ही चिन्तन है, वह ऋत् की भावना से बाहर है। उस मनुष्य (जीव) का जीवन निष्फल है जो ऋत् की भावना से बाहर है। ऋत की भावना के भीतर केवल उसी का जीवन है जो सब के अर्थ का चिंन्तन करता है।[46] जब अग्नि को मानव एवं अन्य जीवों हेतु अन्न उत्पन्न करने की कामना होती है तब वह आकाश के गर्भ से मरूद्गण को उत्पन्न करते हैं और वही उनको समुद्र से बादलों को लाकर जल बरसाने के लिए प्रेरित करते हैं। रुद्र भी अग्नि का नामान्तर हैं जो मरुतों के पिता कहे जाते हैं।[47] वैदिक कालीन ऋषियों का मानना था कि पृथ्वी में सब धन का हेतु अग्नि व सूर्य हैं जिसकी अत्यन्त शीघ्र गति है। राजा 'मित्र' और 'वरुण' नक्षत्रों के बीच सूर्य की रक्षा करते हैं; इसीलिए सूर्य किसी दूसरे नक्षत्रों से टकराकर नष्ट नही होता है।[48]

हमारे प्राचीन ऋषिगण जो शुभ चिन्तन से युक्त और सृष्टि नियम को बखूबी समझते थे वे पर्यावरण के प्रति अत्यन्त सजग थे। उन्हें यह जानकारी थी कि अन्न आदि धन का द्वार नदियों की तरह आकाश से गिरने वाली सात रंग की किरणें हैं अर्थात पर्यावरण सन्तुलन हेतु सूर्य की सप्तरंगी किरण (प्रकाश) महत्वपूर्ण कारक हैं। प्रकाश ही समस्त पेड़–पौधों एवं वनस्पतियों के जीवन का आधार है। प्रकाश के माध्यम से ही इन्हें भोजन की प्राप्ति जल के संयोग से हो सकती है। उनका मानना था कि अग्निदेव मानव एवं देवता दोनों पर उपकार करने वाले हैं। वह मानव जाति हेतु अन्न उत्पन्न करते हैं (अन्न सूर्य रश्मि रूप अग्नि और रश्मियों से उत्पन्न वर्षा द्वारा उत्पन्न होता है। जिसका माध्यम विभिन्न प्रकार की प्रकृति प्रदत्त वनस्पतियां, पेड़–पौधे, झाड़ियां एवं वृक्ष हैं।) और देवताओं के नियमों को जानते हुए उनको 'हवि' पहुॅचाते हैं अर्थात हवि द्वारा वातावरण की शुद्धि होती है। आधिदैविक पक्ष में, पृथ्वी, वायु, सूर्य, वनस्पति, जल, सब देवताओं के जीवन के हेतु अग्नि हैं। आध्यात्मिक दृष्टि से भी इन्द्रिय और मन सबकी स्थिति के हेतु प्राण रूप में अग्नि ही हैं।[49]

अथर्वेद में कहा गया है कि पृथ्वी शान्तिदायक हो, अन्तरिक्ष शान्तिदायक हो, द्युलोक शान्तिदायक हो, जल शान्तिदायक हो, औषधियॉ शान्तिदायक हों, वनस्पतियॉ शान्तिदायक हों, सब देव मुझे शान्तिदायक हों, सबके द्वारा दी

गयी शान्तियों के कारण मेरी शान्ति बनी रहे। सदा शान्ति बनी रहे। इस भूमण्डल में जो घोरकर्म हैं, घातक कर्म हैं, क्रूर कर्म हैं, हिंसक और दुखदायी कर्म हैं, इस भूमण्डल में जो पाप कर्म हैं सब शान्त हो जायॅ। वे सबके लिए दुःखद की जगह सुखद बन जाय[50] अन्तरिक्ष कोहरे तथा अन्धकार और अन्धेरी के कारण हमारी दृष्टि का विघातक न हो। औषधियॉ और वन एवं वृक्ष हमें शान्तिदायक एवं सुखदायक वातावरण एवं पर्यावरण प्रदान करें। मनोरंजक भूलोक का एकाधिपति (राजा) सदा विजयी होकर हम प्रजाजनों के लिए शान्तिदायी एवं सुखदायी हों।[51] सोम, जल हमें शान्ति प्रदान करें, यज्ञ–भूमि, यज्ञशाला , यज्ञकुण्ड हमारे लिए सुखदायी एवं कल्याणकारी हों। प्रखर सूर्य दीप्तियों वाली मानसूनी हवायें हमारे लिए शान्तिदायी एवं सुखदायी हों। पौष्टिक अन्न प्रदान करने वाली पृथ्वी हमारे लिए कल्याणकारी हो।[52] पशुओं (चौपायों व द्विपायों) से दूध ग्रहण करना चाहिए न कि उनका मांस। क्योंकि इससे हमारे पर्यावरण को गहरी क्षति पहुॅचती है। रोग निवृत्ति तथा उत्तम स्वास्थ्य के लिए वनस्पतियों एवं औषधियों का रस लेना चाहिए। तथा उन्हे समूल नष्ट होने से बचाना चाहिए । इनको संरक्षित एवं सुरक्षित करने की जिम्मेदारी राज्य के प्रधानमन्त्री का होना चाहिए। क्योंकि वह राष्ट्र की महासम्पत्ति (प्राकृतिक सम्पत्ति) का संरक्षक होता है।[53] वनस्पति का लोक प्रसिद्ध अर्थ वृक्षादि है। काथक्य आचार्य ने वनस्पति को ''यूप'' अर्थात पशुओं को बांधने वाला खम्भा कहा है। शाकपूर्णि नें वनस्पति को अग्नि कहा है। (निरुक्त–8/3/18), यास्काचार्य ने वनस्पति का अर्थ इस प्रकार कहा है कि –''वनानां पाता वा पालयिता वा'' (निरुक्त–8/2/3) अर्थात् वनस्पति का अर्थ वनों का रक्षक या पालक /पालनकर्त्ता है। मैत्रायणी संहिता (4/13/7) में ''वनस्पते.....वयुनानि विद्वान्'' द्वारा वनस्पति को प्रज्ञानों का विद्वान अर्थात ज्ञाता कहा है। (निरुक्त–8/3/20) प्रज्ञानों का ज्ञाता वनस्पति मनुष्य ही हो सकता है।

आर्यों की संस्कृति मूलतः ग्रामीण थी, अतः उनके जीवन का आधार कृषि तथा पशुपालन था। आर्यों के जीवन में प्रकृति का महत्वपूर्ण स्थान होने के कारण प्राकृतिक घटकों को देव तुल्य माना जाता था। ऋग्वेद के मंत्रों में आर्यो की जीवन पद्धति का विवरण, सर्वोपरि शक्ति के प्रति उनकी मान्यता तथा भक्ति, तथा उनके इस आत्मज्ञान का विवरण मिलता है कि प्रकृति में सदैव परिवर्तनशीलता के साथ–ही–साथ एक निरंतरता भी पायी जाती है। अतः उन्होंने पृथ्वी, आकाश एवं अन्तरिक्ष में विद्यमान समस्त तत्वों को देवतुल्य मानकर उनकी उपासना की। यथा–पृथ्वी, अग्नि, सोम, सरस्वती आदि को पृथ्वी वासी देवता के रूप में; इन्द्र, रूद्र, वायु, पर्जन्य, आप आदि को अन्तरिक्ष वासी देवता के रूप में तथा वरूण, मित्र, सूर्य, सावित्री, पूषण, विष्णु, आदित्य, ऊषा आदि को आकाश वासी देवता के रूप में माना गया। इनके पूजन हेतु आर्यों ने यज्ञ का विधान किया। शतपथ ब्राह्मण में कांड–3 और कांड–7 में यज्ञवेदी के निर्माण की विधि का विस्तृत वर्णन करते हुए बताया गया है कि वृत्त को चतुष्कोण, चतुष्कोण को त्रिकोण और चतुष्कोण को वृत्त में परिवर्तित किया जा सकता है।[54] ए. के. बाग ने अपने पुस्तक ''मैथमेटिक्स इन एंसिएन्ट इंडिया एण्ड मिडिवेल इंडिया[55] में बताया है कि 'आहवनीय' प्रकार की वेदी का आकार चतुर्भुज एवं परिमाप एक वर्ग व्याम होता था। 'गार्हपत्य' प्रकार की वेदी वृत्ताकार एक वर्ग व्याम में बनायी जाती थी इसी प्रकार 'दक्षिणाग्नि' वेदी अर्धवृत्ताकार होती थी जिसका परिमाप एक वर्ग व्याम होता था। शतपथ ब्राह्मण में महावेदी के निर्माण का विस्तार से वर्णन करते हुए बताया गया है कि इसका मुख पूर्व दिशा में होता है। इसे सौमिकी वेदी भी कहा जाता है। इसके पूर्व दिशा की चौड़ाई–24 पग, पश्चिम दिशा की चौड़ाई–24+6=30 पग एवं लम्बाई–36 पग होना चाहिए। वैदिक कालीन लोग ज्योतिष विद्या में अत्यधिक विश्वास करते थे जिसका सीधा सम्बन्ध भौतिकी, गणित, भूगोल, पर्यावरण आदि से था।[56] यज्ञ कार्य हेतु काल का निर्धारण आवश्यक माना गया है जिसका सीधा सम्बन्ध ज्योतिष विज्ञान से है। इसके माध्यम से ही वैदिक कालीन लोग पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र, ग्रहों आदि की गणना, कालचक्र का निर्धारण, वर्षचक्र, ऋतु, पर्व आदि का ज्ञान, सूर्य–ग्रहण, चन्द्र–ग्रहण तथा यज्ञ विधान हेतु शुभ–अशुभ मुहूर्तो आदि की जानकारी प्राप्त करते थे। वेदों में लिखित मंन्त्रों के अवलोकन से ज्ञात होता है कि तत्कालीन लोग छः प्रकार की ऋतुओं की गणना करते थे इन ऋतुओं के अनुसार ही फसल चक्र सिद्धान्त का अनुसरण किया जाता था।

इस प्रकार वेद को पर्यावरण विज्ञान का आदिकालीन सर्वप्रमुख ग्रन्थ माना जा सकता है जिससे जीव विज्ञान, जन्तु विज्ञान, प्राणि विज्ञान, वनस्पति विज्ञान, कृषि विज्ञान, ज्योतिष विज्ञान, वृष्टि विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, रसायन विज्ञान, भौतिक विज्ञान, आदि समस्त विज्ञानों की सामूहिक जानकारी प्राप्त होती है। इन समस्त विज्ञानों के सामूहिक रूप को ही पर्यावरण विज्ञान की संज्ञा दी जाती है। जीव–जन्तु और पेड़–पौधे परस्पर सम्बद्ध हैं तथा उनका अस्तित्व एक दूसरे पर आश्रित है यथा पेड़–पौधे आक्सीजन द्वारा जीव–जन्तुओं को जीवन देते हैं तथा जीव–जन्तु कार्वनडाईआक्साइड द्वारा पेड़–पौधों को भोजन देते हैं जिससे पर्यावरण सन्तुलन व्यवस्थित रहता है। वेद इस व्यवस्था को बनाये रखने हेतु उपर्युक्त विज्ञानों का सहारा लेते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

1.ऋग्वेद–7/49/5 । सम्पादक श्री मन्मोक्षमूलर भट्ट, चौखम्भा संस्कृत सिरीज वाराणसी–1966, भाग–3।
2. कृष्णलाल;वेद परिचय;हिन्दी माध्यम कार्यान्वयनिदेशालय दिल्ली विश्वविद्यालय प्रथम संस्करण–1993;पृष्ठ–112।
3. शुक्ल यजुर्वेद–36/17 । पं. जगदीश लाल शास्त्री, मोतीलाल वनारसीदास दिल्ली–1971।
4.अथर्ववेद–12/1/31। आचार्य विश्वबन्धु वेदशास्त्र संग्रह, प्रथम खण्ड, साहित्य अकादमी दिल्ली–1966।

5.ऋग्वेद–10 / 186 / 3, । सम्पादक श्री मन्मोक्षमूलर भट्ट, चौखम्भा संस्कृत सिरीज वाराणसी–1966, भाग–4 ।
6.ऋग्वेद–3 / 59 / 1 । सम्पादक श्री मन्मोक्षमूलर भट्ट, चौखम्भा संस्कृत सिरीज वाराणसी–1966, भाग–2 ।
7.डॉ. कमल नारायण आर्य, वैदिक वाङ्मय में पर्यावरण एवं प्रदूषण,स्वामी दिव्यानन्द प्रकाषन रायपुर, मध्यप्रदेश–1998 । पृष्ठ–268 ।
8.ऋग्वेद,उपरोक्त । आ वायो भूश शुचिपा उप नः ।
9.आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति, वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ–1983 ।
10.अथर्वेद–12 / 1 / 10 । वही, इन्द्रो यां चक्रआत्मनेन मित्रां शचीपतिः ।
11.अथर्वेद–12 / 1 / 15 । वही, त्वज्जातास्त्वयि चरन्ति मर्त्याः ।
12.यजुर्वेद–10 / 23 । पृथिवी मातर्माहिंसीर्मो अहं त्वाम् ।
13.आचार्य प्रियव्रत वेदवाचस्पति, वेदों के राजनीतिक सिद्धान्त, मीनाक्षी प्रकाशन मेरठ–1983, पृष्ठ–344 ।
14.डॉ. कपिल देव द्विवेदी, वेदों में विज्ञान, विश्वभारती अनुसंधान परिशद् ज्ञानपुर भदोही,–2000 । पृष्ठ–239 ।
15.यजुर्वेद–18 / 55 । समुद्रे ते हृदयम्, अप्सु–आयुः ।
16. ऋग्वेद–10 / 98 / 10 ।
17.डॉ. कपिल देव द्विवेदी, वेदों में विज्ञान, विश्वभारती अनुसंधान परिशद् ज्ञानपुर भदोही,–2000 । पृष्ठ–241 ।
18.अथर्वेद–3 / 14 / 1 ।
19.अथर्वेद–7 / 73 / 8 । अघन्येयं सा वर्धतां महते सौभगाय ।
20.राधा कुमुद मुखर्जी, हिन्दू सभ्यता, राजकमल प्रकाशन दिल्ली–2012 । पृष्ठ–95 ।
21.ओम प्रकाश, प्राचीन भारत का सामाजिक एवं आर्थिक इतिहास, विश्व प्रकाशन,नईदिल्ली, पंचम संस्करण–2012 । पृष्ठ–19 ।
22. वही ।
23.यजुर्वेद–16 / 33 । नमः उर्वर्याय ।
24.अथर्वेद–7 / 11 / 1 । मा नो वधीर्विद्युता. ।
25.डॉ. कपिल देव द्विवेदी, वेदों में विज्ञान, विश्वभारती अनुसंधान परिषद् ज्ञानपुर भदोही,–2000 । पृष्ठ–274 ।
26.वही, पृष्ठ–278 ।
27.ऋग्वेद–7 / 49 / 5, । सम्पादक श्री मन्मोक्षमूलर भट्ट, चौखम्भा संस्कृत सिरीज वाराणसी–1966, भाग–3 ।
28.अथर्ववेद–4 / 19 / 2, (शौनकीयः) सायणाचार्यकृत भाश्येन्,विश्वेश्वरानन्द वैदिक शोध संस्थान, वर्ष–1960 । पृष्ठ–477–78 । अपामार्ग.....न तत्र भयमस्ति, यत्र प्राप्नोष्योषधे ।
29.अथर्वेद–19 / 38 / 1, वही । वर्ष–1962 । न तं यक्ष्मा अरूधन्तें..... यं भेष जस्य गुग्गुलोः सुरभिर्गन्धोंअश्नुते ।
30 .हृदय नारायण मिश्र,पारिस्थिकी दर्षन,षेखर प्रकाशन इलाहाबाद–2006 पृष्ठ–50 ।
31. वही, पृष्ठ–51 ।
32.गीता (9 / 8), प्रकृतिं स्वामवष्टम्य विसृजामि पुनः पुनः, । व्याख्याकार विजय नारायण यादव, कला प्रकाशन वी.एच. यू., वाराणसी–2003 ।
33.गीता(9 / 17), पिताऽहमस्य जगतो माता धाता पितामहः, ।वही, ।
34.लक्ष्मी शुक्ला, संस्कृत साहित्य एवं पर्यावरण चेतना,ईस्टर्न बुक लिंकर दिल्ली–2011,पृष्ठ–9 ।
35.यजुर्वेद 36.17 । ऊँ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोशधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवा शान्तिर्वह्मि शान्तिः सर्वं ऊँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।
36.यजुर्वेद–3.33 । ते हि पुत्रासो अदितेःप्रजीवसेमर्त्याय ।ज्योतिर्यच्छन्त्यजव्रम् ।
37.अन्नपूर्णाभदौरिया,वैदिकसाहित्यमेंवानस्पतिकचिन्तन,पर्यावरण–सहस्रस्त्रोतस्विनी,ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली–2011, पृष्ठ–102 ।
38.यजुर्वेद, 2 / 43 / 2 । उद्गातेव शकुने साम गायसि ।
39. अन्नपूर्णा भदौरिया, वैदिक साहित्य में वानस्पतिक चिन्तन, पर्यावरण–सहस्रस्त्रोतस्विनी, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली–2011,पृष्ठ–104 ।
40.कृष्णलाल, वेद परिचय,हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली वि.वि.दिल्ली– 1993,पृष्ठ–135 ।
41.श्याम सनेही लाल शर्मा, वैदिकसाहित्य में पर्यावरणचिन्ता, पर्यावरण– सहस्रस्त्रोतस्विनी, ईस्टर्न बुक लिंकर्स दिल्ली–2011,पृष्ठ–141 ।
42.वही,पृष्ठ–142 ।
43.ऋग्वेद संहिता, (1 / 64 / 6) शिव नाथ अहिताग्नि, प्रथम मण्डल, चतुर्थ खण्ड,नाग प्रकाशन दिल्ली–1904 । कल्याण दाना मरूतोऽप..... कूपम च दुहन्ति ।
44. ऋग्वेद,1 / 65 / 2, देवा ऋतस्य .....आपःस्तात्रेण वर्धयन्ति । वही, ।
45. ऋग्वेद, 1 / 65 / 5, अप्सुहंसइवोपविशन्.....दूरतःप्रकाशितः(च)अस्ति, । वही ।
46.ऋग्वेद,1 / 67 / 3, हे अग्ने! (त्वम्) पशुजाते प्रियाणिस्थानानि नितरांरक्ष;सर्वस्यऽऽयूरूपः (त्वमेव) गुहायागुहां गतवानसि । वही ।

47. ऋग्वेद,1/68/1 । वही।
48.ऋग्वेद,1/68/3 । ''यदा खलु नराणांपतिम्.....च प्रेरितवान।''वही।
49.ऋग्वेद,1/71/8)। वही।
50.ऋग्वेद–1/71/9 ।यथा–यो मन इव षीघ्रं मार्गान्.....प्रियम्(सूर्यम्) रक्षन्तौ(विद्यते)। वही।
51.ऋग्वेद–1/72/7 ।यथा – हे अग्ने! मनुश्याणां व्यवहारान्जानन्(त्वम्).....रहितो हविशां वोढ़ादूतोअभवः। वही।
52.अथर्वेद भाश्यम्, 19/9/14, शिवनाथ विद्यालंकार, प्रताप सिंह धर्मार्थ ट्रस्ट, माडल टाउन, करनाल–1977। पृथिवी शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिर्द्योः ...सर्वमेव शमस्तु नः।
53.अथर्वेद भाश्यम्, 19/10/5। शं नो द्यावा पृथिवी.....रजसस्पतिरंस्तु जिष्णु। वही।
54.डॉ. कपिल देव द्विवेदी, वेदों में विज्ञान, विश्वभारती अनुसंधान परिषद् ज्ञानपुर भदोही,–2000। पृष्ठ–200।
55.वही।
56.वही, पृष्ठ–200।

Publish Research Article
International Level Multidisciplinary Research Journal
For All Subjects

Dear Sir/Mam,

We invite unpublished Research Paper,Summary of Research Project,Theses,Books and Books Review for publication,you will be pleased to know that our journals are

Associated and Indexed,India

- Directory Of Research Journal Indexing
- International Scientific Journal Consortium Scientific
- OPEN J-GATE

Associated and Indexed,USA

- DOAJ
- EBSCO
- Crossref DOI
- Index Copernicus
- Publication Index
- Academic Journal Database
- Contemporary Research Index
- Academic Paper Databse
- Digital Journals Database
- Current Index to Scholarly Journals
- Elite Scientific Journal Archive
- Directory Of Academic Resources
- Scholar Journal Index
- Recent Science Index
- Scientific Resources Database

Review Of Research Journal
258/34 Raviwar Peth Solapur-413005,Maharashtra
Contact-9595359435
E-Mail-ayisrj@yahoo.in/ayisrj2011@gmail.com
Website : www.ror.isrj.org